परख की परख और जैनेन्द्र कुमार जैन

डॉ० नीलम ऋषिकल्प,

एसोसिएट प्रोफेसर,
रामलाल आनंद कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

परख जैनेन्द्र कुमार जैन की 1929में सर्वप्रथम प्रकाशित रचना है। जैनेन्द्र से पूर्व प्रेमचंद का लेखन अपने चरम पर था। किंतु जैनेन्द्र का साहित्यिक परिवेश प्रेमचंद की भाँति सामाजिक सरोकारों से भरा हुआ नहीं था। जैनेन्द्र जी ने लेखन में व्यक्तिगत समस्याओं को केंद्र में रखकर एक नई शिल्पविधि का निर्माण किया। इससे जैनेन्द्र की पहचान एक मनोवैज्ञानिक कथाकार के रूप में बनी। उन्होंने साहित्य के पात्रों के बाह्य जगत के स्थान पर उनकी आंतरिक समस्याओं को केंद्र में रखा। उनकी कुंठाओं और आत्मपीड़ा का विवेचन किया। इसी कारण उनके पात्र कभी अत्यंत उदार हो उठते हैं। कभी आदर्श बनने लगते हैं और कभी–कभी अटक भी जाते हैं पर रुकते नहीं हैं इसी कारण उनका व्यक्ति टाइप बनने से बच जाता है वह जीवन में नए आदर्श को खोजना चाहते हैं। इसीलिए वह साहित्य में आदर्श या यथार्थ की अपेक्षा आदर्श प्रेरणा को महत्त्व देते हैं। इसी को जीवन की वास्तविकता भी मानते हैं जिसमें हमारे मनोरथ भी पूर्ण होते हैं। इस विषय में वह स्वयं लिखते भी हैं –"साहित्य अब प्रेरक भी है। वह झलकता ही नहीं, अब चलाता भी है। हमारी बीती ही उसमें नहीं, हमारे संकल्प और मनोरथ भी आज उसमें भरे हैं। उनके लेखन में हम पाते हैं कि जीवन के विविध मनोविज्ञान और समस्याओं से उनके पात्र जूझते हैं। तभी वह जीवन की जटिलताओं को भी तोड़ पाते हैं और समाज को भी एक नया आकार दे पाते हैं। यहाँ जैनेन्द्र के साहित्य की महत्त्वपूर्ण विशेषता है। इस तरह 'परख' उपन्यास में जैनेन्द्र मनोवैज्ञानिक समस्याओं को समाज के साथ को जान लेना जरूरी है कि उनके मनोविज्ञान में कोई चरित्र अकेले स्वयं से ही नहीं टकराता है बल्कि उसके साथ समाज, परिवार, संबंध सभी से बंधा रह जोड़कर रखा है। यह स्वतंत्रता आंदोलन के समय की रचना है। जिसमें समाज का हर व्यक्ति आंतरिक और बाह्य संघर्ष से जूझ रहा था। इसलिए जैनेन्द्र अपने लेखन में कई समस्याओं से एक साथ टकराते हैं। परख उपन्यास के कथानक का विश्लेषण करते हुए उनके प्रमुख बिंदु हमें परख में भी देखने को मिलते हैं।

यह सब हम परख की कथानक में देख सकते हैं।

परख की कथा का आरंभ सत्यधन के वकालत पास कर लेने से होता है। किंतु जब उसे यह सच पता चलता है कि वकालत झूठ पर चलने वाला धंधा है, तो वह वकालत न करने का निर्णय करता है और अध्यापक बन जाता है। बिहारी सत्यधन का सहपाठी है। दोनों में गहरी मित्रता है। बिहारी के परिवार से भी सत्यधन का अच्छा परिचय हो जाता है। इसी कारण बिहारी के पिता अपनी पुत्री गरिमा का विवाह सत्यधन से करना चाहते हैं। अध्यापक सत्यधन पड़ोस की बाल विधवा लड़की को पढ़ाने का काम करने लगते हैं। साथ ही वह उसके आकर्षण में फंसकर उससे प्रेम भी करने लगते हैं। लेकिन सत्यधन जब जीवन की वास्तविकता का हिसाब लगाते हैं तो समझ जाते हैं कि कट्टो के साथ जीवन में खर्च ही खर्च बढ़ेगा। जबकि गरिमा के साथ

संबंध बनने पर लाभ होगा। प्रतिष्ठा भी बढ़ेगी पैसा भी खूब मिलेगा। जीवन भी सुखी होगा। यही पर कट्टो के प्रति प्रेम भावना के कारण उसके मन का अंतर्द्वंद्व बढ़ता है और आत्मसंघर्ष करता हुआ वह इसी निर्णय पर पहुँचता है कि कट्टो का विवाह किसी और से करवाना होगा। इससे उसका दायित्व भी पूरा होगा, और वह आत्मग्लानि से भी बच जाएगा। अपने मन का यह सत्य वह गरिमा के पिता को बता देता है और बाबूजी भी सत्यधन का निर्णय जानकर प्रतीक्षा करने को तैयार हैं।

सत्यधन और बिहारी कुछ समय के लिए कश्मीर यात्रा पर एक साथ निकलते हैं। मन में गहरी मित्रता का विश्वास लिए हुए सत्यधन बिहारी को गरिमा के विवाह करने का प्रसंग छेड़ता है। सत्यधन बिहारी के दयालु स्वभाव से परिचित है वह जानता है कि बिहारी डूबते को बचाने के लिए नदी में कूदने में संकोच नहीं करेगा। इसलिए वह बिहारी को कट्टो को विधवा जीवन से निकाल कर उससे विवाह करने के लिए तैयार कर लेता है। बिहारी के स्वभाव को जानते हुए उसके पिता भी इस बात पर कोई आपत्ति नहीं करते हैं। बिहारी भी सत्यधन से प्रेरित होता है और कट्टो के समर्पण भाव को देखकर उससे विवाह करने का मन बना लेता है। लेकिन आदर्श का दिखावा करने के लिए इसे विवाह न कहकर 'चेतना का संबंध' मानता है।

इस तरह 'परख' उपन्यास में जैनेन्द्र मनोवैज्ञानिक समस्याओं को समाज के साथ जोड़कर रखा है। यह स्वतंत्रता आंदोलन के समय की रचना है। जिसमें समाज का हर व्यक्ति आंतरिक और बाह्य संघर्ष से जूझ रहा था। इसलिए जैनेन्द्र अपने लेखन में कई समस्याओं से एक साथ टकराते हैं। परख उपन्यास के कथानक का विश्लेषण करते हुए उनके प्रमुख बिंदु हमें परख में भी देखने को मिलते हैं।

प्रेम और विवाह

'परख' उपन्यास में 'प्रेम और विवाह' की समस्या प्रमुख है। प्रेम जीवन का अनिवार्य अंग है। उनमें कोई तर्क, सूझबूझ या नियम काम नहीं करता। इसी कारण सत्यधन और कट्टो एक दूसरे के आकर्षण में बंधते हैं। किंतु सत्यधन बुद्धि का प्रतीक है। विचार शक्ति के आते ही जीवन के दायित्व को महत्त्वपूर्ण मानकर आत्म–विश्लेषण करने लगता है। सिद्धांत रूप में जैनेन्द्र प्रेम और विवाह दोनों को महत्त्वपूर्ण मानते हैं। किंतु विवाह को प्रेम से बड़ी चीज मानते हैं उसमें भले ही प्रेम न रहे। उनका मानना है कि विवाह के द्वारा ही मनुष्य अपने सामाजिक दायित्व का निर्वाह ठीक से कर सकता है। बाल विधवा कट्टो के प्रति सत्यधन के आकर्षण को देखकर प्रतीत होता है जैनेन्द्र जल्द 'विधवा विवाह' का एक आदर्श यहाँ जोड़ देंगे किंतु इस आदर्श की नींव वह प्रेम पर नहीं खड़ी होने देना चाहते और पाठकों का भ्रम टूट जाता है वह विधवा का विवाह तो करवाते हैं किंतु उसी प्रेमचंद युकीन सुधारवादी आदर्श बिहारी के साथ जो कर्त्तव्य परायण होकर अपने लिए समाज के लिए अपना जीवन अर्पण करता है। मानो जैनेन्द्र के यहाँ विवाह में प्रेम के लिए कोई स्थान नहीं है और प्रेमचंद की भाँति आदर्श व्याख्यान दे डालते हैं –'प्रेमजीवन को बहलाने की वस्तु तो बन जाती है लेकिन जीवन उसके लिए स्वाहा नहीं किया जा सकता, जीवन तो दायित्व है और विवाह वास्तव में उसकी पूर्णता की रहा – प्रेम को इस दायित्वपूर्ण विवाह की बात में कैसे देने दिया जाए।

जैनेन्द्र और गाँधीवाद

जैनेन्द्र विवाह को जीवन में समझौता मानते हैं। विवाह में मन को मारना पड़ता है। दूसरों की सुविधा का ध्यान रखना पड़ता है विवाह दूसरों के साथ प्रेम करके संतोष प्राप्त करने के लिए भी

अनिवार्य है। सामाजिक दायित्वों से उऋण होने के लिए भी विवाह साधन है। समाज की इकाई और परिवार इसी नींव पर स्थित है। विवाह गांधीवादी विचारों में मात्र रोमांस या अपनापन नहीं अपितु यज्ञ है यह यज्ञ जैनेन्द्र कट्टो और बिहारी से करवाते हैं और जीवन की सत्य की 'परख' इसी भाव के मानदण्ड पर कराते हैं –

कट्टो ने बिहारी से पूछा – 'अब'?

"अब! हमारा यज्ञ आरंभ होता है।"

"मैं क्या करूँ?''

गाँव जाओ। बच्चियों को पढ़ना, उसी से गुजारा चलाना।

"तुम"?

"मैं भी गाँव जाकर किसान बनता हूँ"।

"उस–मेरे गाँव में?''

"नहीं! वहीं दूर फिर से पास। अलग, तो भी एक। कहीं दूर गाँव में जाऊँगा।"

गाँव जाकर बच्चियों को पढ़ाना और उसी में 'गुजर चलाना' गांधी जी के बेसिक शिक्षा का संकेत देता है वकालत की डिग्री लेकर भी गाँव में खेती–किसानी का आदर्श गांधी के प्रमुख सपनों में से एक था।

स्त्री और नैतिकता

तीसरा प्रमुख बिंदु इसमें जैनेन्द्र जी का स्त्री के प्रति दृष्टिकोण देखने को मिलता है। स्त्री में नैतिकता और सतीत्व इस मुद्दे को भी जैनेन्द्र उठाते हैं। पुरुष को इससे अलग रखते हें। जब जैनेन्द्र जी ने लिखना शुरू किया तब नैतिकता को लेकर स्त्री और पुरुष के लिए समाज में दोहरे मानदण्ड बने हुए थे। इसे जैनेन्द्र बचने का प्रयास करते हैं और प्रगेमचंद से अपने को अलग करने का प्रयास भी करते हैं। प्रेम उनके यहाँ वैयक्तिगत चीज है जबकि विवाह सामाजिक दायित्व व संस्था है जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों का प्रेम बलि चढ़ती है और स्त्री–पुरुष (कट्टो–बिहारी) इस यज्ञ (विवाह) में सर्वस्व त्याग के साथ आहूत होते हैं जिसमें सत्यधन की नैतिकता (कट्टो के लिए जीवन का संरक्षण) और बिहारी की नैतिकता (बहन गरिमा का सत्य से विवाह कराने के लिए) सामाजिक मर्यादा और नैतिकता का पालन करती है और जैनेन्द्र इसमें खरे उतरते हैं।

इसी के साथ जब जैनेन्द्र स्त्री स्वातंत्र्य की ओर डालते हैं तो वह कट्टो की दलित कुंठाओं को उदस्तता देकर उसे बिहारी से विवाह का निर्णय करने में सहायता करते हैं। पर जहाँ वे कहते हैं "सब कुछ स्त्री बनाती है धर्म स्त्री पर टिका है, सभ्यता स्त्री पर निर्भर है और फैशन की जड़ भी वही है। बात क्यों बढ़ाओ, एक शब्द में कहो दुनिया स्त्री पर टिका है, सभ्यता स्त्री पर निर्भर है और फैशन की जड़ भी वही है। बात क्यों बढ़ाओ, एक शब्द में कहो दुनिया स्त्री पर टिकी है।' पढ़कर बहुत अच्छा लगता है जैनेन्द्र स्त्री को कितना सम्मान देते हैं और लगता है जैनेन्द्र शरद के (घर बाहर से) आगे–आगे निकल गए हैं। लेकिन कट्टो को बलि चढ़ाकर जब वह सत्यधन के सत्य और नैतिकता की रक्षा करते हैं तब लगता है जैनेन्द्र स्त्री के साथ बहुत न्याय नहीं कर पाते हैं। उलटा स्त्री से बार–बार त्याग करवाकर वह किसी तरह पुरुष की ही रक्षा करते हैं। डॉ० राजेंद्र गौतम के शब्दों में कहें तो ठीक ही लगा है। "स्त्री–पुरुष संबंध में कई बार ऐसा लगा है कि आज के स्त्री–विमर्श के कोण से देखें तो जैनेन्द्र जी पुरुषवादी लेखक ही ठहरते हैं।"

परख श्रेय या प्रेय

परख का एक और प्रमुख बिंदु जैनेन्द्र जी का प्रिय विषय 'श्रेय और प्रेय' है उसे भी जैनेन्द्र ने परख की कथा में बखूबी पिरोया है बिहारी, सत्यधन और कट्टो की कथा के माध्यम से वह दो

रास्ते दिखाते हैं। एक प्रेय का धन के पीछे दौड़ने वालों का, जिसमें सत्यधन और गरिमा भाग रहे हैं दूसरा धन को त्यागकर श्रेय (कल्याण मार्ग) जो कट्टो तथ बिहारी अपनाते हैं। पाठक भले ही श्रेय और प्रेय के बारे में विचार न करें परंतु इन दोनों यहाँ पर चलने वाले पात्रों की कथा एक बार मन को छूती अवश्य है। अर्थ ही तह तक कुछ इस तरह खुलती है कि 'गरिमा सत्यधन भौतिक सुख–सुविधाओं से भरा जीवन यापन करते हैं पर वहाँ प्रेम नहीं है सत्यधन कट्टो के प्रेम को खाने की पीड़ा से स्वयं को मुक्त नहीं कर पाता है। दूसरी ओर श्रेय के मार्ग पर चलने वाले बिहारी कट्टो का गाँव में जाकर कृषि सभ्यता में जाकर बच्चों को पढ़ाते हैं जो वास्तविक भारतीय जीवन है सच्ची सहानुभूति है, करुणा है, त्याग है। इस मूल्यवान धरोहर को हम सत्यधन के मार्ग पर चलकर खो चुके हैं यह भी सही है कि हम दुनिया की गति को बदल नहीं सकते पर 'परख' को पढ़कर एक बार फिर मन झकझोरता है कि हमने कितना अपना मूल्यवान खो दिया इन चरित्रों के माध्यम से श्रेय और प्रेय का द्वंद्व पाठकों को एक बार फिर झकझोरता है और सोचने पर विवश करता है कि श्रेय या प्रेय। इस तरह परख की कथा के माध्यम से श्रेय और प्रेय का सनातन द्वंद्व आज भी हमारी चेतना को झकझोरता है।

परख के पात्र

कथा में गति और प्राण देने का कार्य तो पात्रों के माध्यम से ही संभव है। इस दृष्टि से 'परख' के पात्र बहुत महत्त्वपूर्ण हैं यदि बारीकी से विश्लेषण करो तो यह पात्र तीन युगल के रूप में काम करते हैं इनमें पहला युगल सत्यधन और कट्टो का है जिसमें कट्टो उपन्यास का महत्त्वपूर्ण चरित्र है क्योंकि उपन्यास की कथा उसी के इर्द–गिर्द घूमती है कट्टो के रूप में जैनेन्द्र जी ने नारी के सनातन अलौकिक गुणों की प्रतिष्ठा की है। आत्मा का शुद्ध सात्विक रूप मानकर कट्टो को चित्रित किया गया है यानि छल, कपट, मान प्रतिष्ठा, लाभ–हानि का वहाँ कोई मूल्य नहीं है। प्रारंभ में वह प्रेयसी, फिर पत्नी वह पत्नी के रूप में उतनी प्रभावशाली नहीं है जितनी प्रेयसी के रूप में।

सत्यधन और गरिमा के विवाह की बात सुनकर वह तनिक भी विचलित नहीं होती 'जो कुछ भी तुम चाहते हो उस सबमें कट्टो की खूब राय है।' उनका आत्म त्याग उसे महान बना देना है।

कट्टो का वर्णन करते हुए जैनेन्द्र जी लिखते हैं –"कट्टो गिलहरी को कहते हैं उसकी ठोड़ी गिलहरी के मुँह जैसी है, वैसी ही नोकदार। उसके चेहरे से भी वही गिलहरी का भाव टपकता है।' उसका निखशिख वर्णन करते हुए जैनेन्द्र आगे लिखते हैं –"बालिका सुंदर नहीं है। उसके ओंठ जरा ज्यादा ताजे और खुले हैं और जैसे फैलते–फैलते यकायक रुक गए हैं ..... रंग उतना उजला नहीं, जितना साँवला है लेकिन आँखें .... जाने उनमें क्या है। वे एक क्षण टिककर कहीं ठहरती नहीं। यहाँ वहाँ तिरती रहती हैं, पर ठहरती हैं तो जैसे उसके भीतर तक चली जाती हैं। इन आँखों में न जाने कैसा औतुसुक्य और जाने क्या है कि लगता है कि जैसे उसे सब हरियाली है, सब निमंत्रण है, सब चेतावनी है।'

सत्यधन इस उपन्यास का नायक और प्रमुख पात्र है। वकालत पास नवयुवक सत्यधन 1929 के आसपास गाँधीवाद से भरे वातावरण में गांधी जी की मान्यताओं के प्रति मनसा, वाचा, कर्मणा, समर्पित है। गाँधीवाद से उत्पन्न ढोंग दम्भ और दोगलेपन को विचारों की छूरी से चीरता है। सत्यधन का वकालन न करने का फैसला कट्टो के प्रति दायित्व अनुभव करना, उसे पढ़ाना सब चलचित्र की तरह आँखों के सामने घूमता है। बीच–बीच में उसकी युवा मानसिकता का लेखक मजाक उड़ाता है तो कथा को

अनोखापन और नया रस देता है। कट्टो और सत्यधन के विचारों और व्यवहारों का नटखट शैली में दिखाया गया सतहीपन परख को नयापन देता है। सत्यधन इस उपन्यास का आदर्शोन्मुख यथार्थवादी पुरुष है वह स्वार्थवश नियतिवादी हो जाता है और घटना के होने के कारण वह प्रकृति को मानता है। दर्शन, साहित्य का निरंतर चिंतन और अध्ययन से उसकी भावनाओं की पुष्टि मिलती है। कट्टो से पीछा छुड़ाने के लिए भी वह भाग्य का खेल समझकर मुक्त हो जाना चाहता है और अपने मन को समझाते हुए कहता है – "जो होना था, वह तो होना ही है, पर कडुआपन क्यों रहे? हँसी खुशी सब क्यों न हो जाए।" इस तरह सत्यधन एक व्यवहारिक आदर्श पात्र के रूप में उपन्यास की धुरी बना रहता है।

उपन्यास का तीसरा पात्र बिहारी है। बिहारी मानवीय संवेदना की प्रतिमा जैसा लगता है। वह गाँव में जाने से पूर्व सत्यधन से कट्टो के बारे में सुनता है लेकिन जब वह कट्टो से मिलता है तो देखता है कट्टो के बारे में जितना वह जानता है कट्टो उससे महान है सच्चे अर्थों में यदि कट्टो को कोई जान सका तो वह बिहारी ही है। सत्यधन की गरिमा से विवाह की इच्छा को सुनकर वह तनिक भी विचलित नहीं होती अपितु सहज स्वीकार भाव से कह उठती है – "बहुत दिनों के बाद आज मालूम हुआ कि वह कुछ दे सकेगी जो उनकी खुशी की राह खोल दे। बड़ा सौभाग्य है कि मैं आखिर उनके किसी काम आऊँगी।" तब बिजारी उसके मन की गहराई, श्रद्धा और प्रेम को समझकर कहता है – "दुनिया में सभी सत्य नहीं है, बिहारी भी है तुम्हारी तरह पुरुष भी है जो बिना लिए दे सकते हैं।"

यही वाक्य दोनों को एक–दूसरे के समीप ले आते हैं जिससे वह एक दूसरे को समझते हैं और स्वीकार करते हैं। परस्पर एक आदर्श की सीमा को छूने वाली अति कठिन यज्ञ को संकल्प करते हैं – "क्या हम भी दो ऐसे नहीं हो सकते? दूर फिर भी बिल्कुल पास, अलग फिर भी अभिन्न दो, फिर भी एक। एक ही उद्देश्य, एक ही जीवन लक्ष्य पिरोये हुए।'

दोनों दूसरों के लिए जीने का प्रण करते हैं और संकीर्ण शारीरिक बंधन को तोड़कर एक व्यापक ममत्व में खो जाते हैं कट्टो को जिस तरह बिहारी की निष्ठा को वह शीघ्र पहचान लेती है उसी के शब्दों में – "वास्तव में वह खूब भारी है उनके व्यक्तित्व का लंगर खूब गहराई में बड़ी मजबूती के साथ एक निष्ठा में गड़ा हुआ है।' इस तरह बिहारी अपने जीवन में सिद्धांतों का दृढ़ता से पालन करता है कट्टो और बिहारी के परिणय में भौतिकता को भांपकर आत्मिकता की गहराई से उनका निर्माण किया है। दोनों पाने के लिए नहीं देने में विश्वास करते हैं जो जैनेन्द्र के पात्रों के मनोवैज्ञानिक चिंतन को साकार करता है और उनके शिल्प की नई विधि से पाठकों का परिचय होता है।

परख के बाबूजी

परख का एक और महत्त्वपूर्ण पात्र है बाबूजी। जो सभी चीजों को बहुत बारीकी से देखते हैं और समझते हैं उपन्यास में उनकी भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण है वह जिस धैर्य और चालाकी से सत्यधन को बांधते हैं उसी से सत्यधन को सहारा मिलता है। बाबूजी उपन्यास में जीवन की उलझनों का ऐसा स्पष्ट वर्णन करते हैं। जो वास्तविकता से भरा हो जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता है – "सीधी, भोली, चिकनी दुनियादारी, जहाँ गड्ढों से बचकर सिर्फ पक्की बनी बनाई सड़क पर चलकर संतोष मान लेना पड़ता है, कोई बहुत श्रेय की चीज नहीं है। यह बाबूजी ने अपने सफल जीवन से समझ लिया है। उन्होंने प्रतिष्ठा भी बनाई, रुपया भी पैदा किया पर कुछ नहीं।' जीवन में कभी बड़ा रस नहीं पाया।

इस तरह सत्यधन को अपने रास्ते जो सीधी और सरल है उस परले आते हैं और बिहारी को मनमानी करने की छूट दे देते हैं। यहीं बाबूजी अंत में बिहारी को सारी संपदा देते हैं भले ही उनके निर्णयों से गरिमा उनकी स्वयं की पुत्री उनसे चिढ़ती है पर कट्टो उनकी सेवा करने, उनका आशीर्वाद और संपत्ति पाती है यहीं दुनिया की रीर है जो आज भी समाज में चल रही है। पर जैनेन्द्र उसका यथास्थिति चित्रण करने में सफल हुए है।

परख की भाषा और शिल्प विधान

उपन्यास के परंपरागत रूप और शिल्प विधान की दृष्टि से परख का परीक्षण किया जाए 'परख' की कथा प्रेम और विवाह के आस–पास घूमती है जिसमें संवेदना की अपेक्षा आदि से अंत तक दार्शनिक विचार या उद्देश्य के सूत्र रूप में पिरोया गया। कांवई किशोरिका कट्टो के प्रेम में गांधीवादी आदर्श का नकाब सत्यधन के आदर्श का नकाब हटता है उसका हृदय आदर्शवाद भौतिकता के रुझान और गरिमा से विवाह की स्वीकृति उसे आदर्श से विचलित कर देती है। वह कट्टो के लिए अपने स्थान पर बिहारी को देकर स्थिति से स्वयं को अलग कर देता है। बिहारी और कट्टो के विवाह के सूत्र में बांधकर लेखक अपनी द्वंद्वात्मक बुद्धि का परिचय इन शब्दों में देते हैं – 'उसके 'परख' के सत्यधन की व्यर्थता मेरी है और बिहारी की सफलता मेरी भावनाओं की है और कट्टो व जिसने मुझे व्यर्थ किया और कट्टो वह है जिसे मैं अपनी समस्त भावनाओं का वरदान देना चाहता हूँ।' इस कथन से लगता है कि जैनेन्द्र जी का वैयक्तिक सत्य ही इस कथा के पात्रों में प्रस्तुत होकर आया है। जिसमें एक ओर यौवन सुलभ आदर्श है और दूसरी और संवेदना जिसे आदर्श छिन्न–भिन्न कर देता है। प्रेम और विवाह की समस्या को उठाकर जैनेन्द्र जी ने प्रेम की 'परख' इस कथा के माध्यम से की है जिसमें प्रेम और विवाह दोनों को तौलने का प्रयास करते हैं। कथा में विस्तार बहुत अधिक नहीं है मनोविज्ञान की सूक्ष्म सूची से मन के द्वंद्वों, प्रश्नों और विचारों को उकेरने का प्रयास बड़ी खूबी से करते हैं।

भाषा उपन्यास का अंश है। जैनेन्द्र की भाषा, सरल और व्यंजक है। उसमें गहन से गहन चिंतन को वहन करने की शक्ति है उनकी भाषा दार्शनिक किंतु चित्रमयी है। भाषा पर अर्थ और अभिव्यक्ति दोनों का दायित्व मानते हुए जैनेन्द्र अपने निबंध श्रेय और प्रेय में लिखते हैं – "कहानी उपन्यास में भाषा सिर्फ अर्थ देकर सार्थक नहीं हो सकती भाव को भी उसे युगपात चित्रित और जागृत करने जाना होगा।' परख में भी जैनेन्द्र भाषा की सामर्थ्य से किसी भी वस्तु या स्थिति को चित्र जैसे साकार कर देते हैं – "कट्टो की आँखों का वर्णन वे कुछ इसी ढंग से करते हैं – "आंखें आँसुओं से खूब धोई गई हैं और फूल आई हैं जैसे फूली, फली, धुली कमल की दो लाल पखुंडियाँ हों, लेकिन उनके सारे भेद और सारे स्नेह को पलकें मजबूती से ढके हुए हैं।"

जैनेन्द्र के पात्रों की भाषा की विशेषता है कि वे समय, परिस्थिति और परिवेश के अनुकूल भाषा बोलते हैं। यहाँ ग्रामीण भाषा से भी सहायता मिलती है। इस विषय में चंद्रकांत वादिवडेकर लिखते हैं – 'कट्टो और सत्यधन के संवाद में गंवई गाँव के शब्दों और ठसक से जीवंतता आई है, उसका स्थान तो अपने आप में है, धीरे–धीरे दोनों जिस अनजाने भाव से बंधते हैं उसका चित्रण मन को भीतर से प्रभावित करता है। .... जीवन की गहराई में जो लहर उठी हो उसको मनुष्य के बनाए हुए धारणा संकल्पों के रेत के किनारे, कहाँ, कब तक रोक सके हैं।' इस प्रकार के जीवन विषयक निर्णयों को भी वह सत्यधन के माध्यम से ठोस जमीन प्रदान करते हैं। अनपढ़ कट्टो और वकालत पास सत्यधन के बीच ऊपरी विरोध और भी तट की गहनता उपन्यास में चमत्कृति पैदा करती है। कट्टो के भविष्य के प्रति

चिंतित मास्टर साहब उसी से सहायता और उदारता मांगने लगते हैं सब कुछ नाटकीय ढंग से पाठक को मुग्ध करता हुआ रसासक्ति करता है।"

इसी तरह कट्टो की माँ बिहारी से बात करते हुए सहज भाव से अपने ही परिवेश में शब्द – खबरदार, नेक, सपने, बिसराम, सुस्त, कलेस आदि शब्दों का सहज रूप से प्रयोग करती हैं। उनकी भाषा के विषय में डॉ० इंद्रनाथ मदान का कथन है – "जैनेन्द्र उस कुशल ग्रहणी के समान हैं जिसके पास पकवान थोड़े हैं लेकिन वह परोसने में कुशलता का परिचय देती है। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि जैनेन्द्र की भाषा में निजीपन के साथ–साथ खुलापन भी है।'

परख के प्रसंगों की ताजगी और उनकी सरलता का प्रवाह जैनेन्द्र की भाषा–शैली की सप्राणता है। चंद्रकांत बान्दिवडेकर लिखते हैं – 'परख की आस्वादनीयता आज भी बरकरार है। शायद यही तत्त्व है जो साहित्य को टिकाऊ बनाता है। जैनेन्द्र के विचारों से अहसमत हुआ जा सकता है, उनके दर्शन से मतभेद हो सकते हैं। काल की कसौटी पर दृष्टिगोण भी कुछ पुराना कहा जा सकता है। किंतु जो भावपूर्ण व्यथासिक्त रस प्रसंग है। उसकी शक्ति को कैसे नकारा जा सकता है? आज परख अगर छूता है तो इसलिए कि हम उसे काव्य के धरातल पर रखकर पढ़ते हैं। इस उपन्यास की भाव भीनी तरलता आज भी रससिक्त करती है।'

संवादों की कथानक को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। संवाद के बहाने चरित्रों और कहने के ढंग से व्यक्ति के चरित्र के गुणों का पता चलता है संवाद अन्य पात्रों के चरित्र का भी विकास करते हैं – उदाहरणार्थ बिहारी से बातचीत करते हुए कट्टो का अडिग विश्वास उसके चरित्र की विशेषता के रूप में उभरकर आता है वह बिहारी से कहती है कि 'तुम दिल्ली से व्यर्थ आए हो सत्यधन के विवाह की बात पक्की न कर सकोगे। वाक्य कहीं–कहीं ऊप्पखुले और अपूर्ण रह जाते हैं यह जैनेन्द्र की मुख्य प्रवृत्ति है। कहीं मौन से काम चला लेते हैं चौंकानेवाले घटनाओं में हरे, अरे जैसे विषमबोधक शब्दों का प्रयोग करते हैं कहीं अनुमान दे दिया जाता है मानो वही उनकी भाषा हो कट्टो के कथनों में उसके औदम्य एवं निर्दोषपूर्ण व्यक्तित्व की शृंखलाएँ स्पष्ट होती हैं जब वह गरिमा से वार्तालाप करती है। "जीजी बैठो न! तुम भी तो बैठो! मैं पीछे खाऊँगी। नहीं जीजी यह कोई बात है, तुम तो मेहमान हो, जीजी हो,।" इस प्रकार संक्षिप्त सहज कथन कथा में गति एवं नाटकीयता उत्पन्न करने में समर्थ है। कथा में नाटकीय गति के साथ वातावरण को संजोने में जैनेन्द्र पारखी हैं वह पात्र और परिस्थिति से जुड़े वातावरण का बहुत सुंदर निर्माण करते हैं। उसका उदाहरण परख में पात्र की मनोस्थिति के अनुकूल वातावरण का सृजन हम इन पंक्तियों में देख सकते हैं। 'सत्य वहाँ ठहर न सके। उनके प्राणों में जो थक ज्वार उठा। मीठे दर्द का तूफान सा वह दीवारों से घिरे उस कमरे में झेला नहीं जा सकेगा कमरे से निकल पड़े .... वहीं पहुँचे। ऊपर चारों ओर बिना सीमा का आकाश फैला है। हवा हल्की–हल्की बह रही है, मानो उसी माँ की ठंडी उष्मा उसमें हैं।" इसी तरह वातावरण का निर्माण में कुशल जैनेन्द्र शब्दों के द्वारा ही निस्तब्धता को ध्वनित कर देते हैं – "कट्टो आना चाहती है, कहीं खटका न हो। समय मानो रुक गया है, हवा ठहर गई है। मित्रों की निकलती हुई सांस ही मानो वहाँ कमरे में सचल वस्तु है।"

इस प्रकार परख में सूक्ष्म वातावरण का निर्माण उपन्यास की शिल्प विधि में नए रंग संजोकर कथा को गतिमान बनाए रखता है।रस की भाव भीनी तरलता आज भी रससिक्त करती है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि परख में कथातत्व कम द्वंद्व अधिक दिखाई देता

है। यह द्वंद्व व्यक्ति और समाज का न होकर व्यक्ति का अपने व्यक्तित्व से संघर्ष है। लेकिन यह व्यक्ति आत्म केंद्रित नहीं है अपितु बाह्याकांड का केंद्र है। 'परख' में बुद्धि और मन का द्वंद्व है। सत्यधन को वह बुद्धि का प्रतीक बनाते हैं और कट्टो को रागात्मिकता वृत्ति का। यहाँ वह मनुष्य की व्यवसायिक दृष्टि से रागात्मक दृष्टि को श्रेष्ठ बनाना चाहते हैं। इसलिए कट्टो और बिहारी को सत्यधन से श्रेष्ठ दृष्टि वाला दिखाना चाहते हैं किंतु वह मनुष्य की दुर्बलताओं के प्रति सहानुभूति रखाने की अपेक्षा पाठकों से करते हैं। इसीलिए वह परख की भूमिका में पहले ही स्पष्ट कर देते हैं – "उसके 'परख' सत्यधन की व्यर्थता मेरी है और बिहारी की सफलता मेरी भावनाओं की है और कट्टो वह है जिसने मुझे व्यर्थ किया है और जिसे मैं अपनी समस्त भावनाओं का वरदान देना चाहता था। यही कारण है कि 'परख' में एक ओर यौवन सुलभ आदर्श है तो दूसरी ओर संवेदनात्मक है जो कर्त्तव्य और दायित्व बोध से नष्ट हो जाती है। 'परख' में जैनेन्द्र ने 'प्रेम और विवाह' की समस्या के माध्यम से प्रेम की परख प्रस्तुत की है जिसमें सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विवेचन कलात्मक रूप में सामने उभरकर आया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. जैनेन्द्र के उपन्यास – डॉ० आदित्य प्रथाण्डिया, तारामण्डल प्रकाशन, अलीगढ़
2. जैनेन्द्र की आवाज – डॉ० अशोक वाजपेयी, पूर्वोदय प्रकाशन
3. जैनेन्द्र उपन्यास और कला – डॉ० विजय कुलश्रेष्ठ
4. व्यक्ति कथाकार और विचार – संपा० बांके बिहारी भटनागर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस
5. निबंधों की दुनिया – जैनेन्द्र कुमार जैन, डॉ० निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन
6. जैनेन्द्र के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन – डॉ० देवराज उपाध्याय, पूर्वोदय प्रकाशन
7. जैनेन्द्र और उनके उपन्यास – डॉ० परमानंद श्रीवास्तव, दि मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड
8. जैनेन्द्र के उपन्यास मर्म की तलाश – डॉ० चंद्रकांत वांदि वडेकर, पूर्वोदय प्रकाशन
9. जैनेन्द्र उपन्यास और कला – डॉ० विजय कुलश्रेष्ठ, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
10. जैनेन्द्र के उपन्यासों में नारी पात्र – डॉ० सावित्री महपाल, मंगल प्रकाशन, जयपुर
11. जैनेन्द्र का जीवन दर्शन – डॉ० कुसुम कक्कड़, पूर्वोदय प्रकाशन?
12. जैनेन्द्र के उपन्यासों का शिल्प – डॉ० ओम प्रकाश शर्मा, पांडुलिपि प्रकाशन